Artistic Narration, Vol. VIII, 2017, No. 2: ISSN (P) : 0976-7444 (e) : 2395-7247Impact Factor 3.9651 (ICRJIFR)
UGC Approved Journal No. 43285

गांधी जी का सत्याग्रह और कलाकारों का समावेश

डॉ0 रनिका

प्रवक्ता, चित्रकला विभाग, आई0 एन0 पीजी कालिज, मेरठ

Reference to this paper should be made as follows:

डॉ0 रनिका,
गांधी जी का सत्याग्रह और कलाकारों का समावेश,
Artistic Narration 2017,
Vol. VIII, No.2, pp. 37- 44
http://anubooks.com/?page_id=485

सारांश

महात्मा गांधी ने कहा था ''दिल्ली भारत नहीं है, भारत तो गांवों में बसता है।'' अतः यदि हम भारत को उन्नत करना है तो गावों की दशा सुधारनी होगी। गांधी जी ने नारा दिया था ''गावों को वापस चलों''। इसी को ध्यान में रखकर ही गांधी जी के नेतृत्व में लड़ी गई आजादी की लड़ाई को गांव–गांव तक पहुचाया गया और उन सबके मिले जुले संकल्प से ही देश को आजादी मिली।

गांधी जी का मानना है कि साहित्य और कला को सत्य, हितकर और उपयोगिता की कसौटी पर पास होना ही चाहिए। गांधी जी कहते हैं कि सत्य को यहां व्यापक अर्थ में लेना चाहिए। तकसील अथवा घटनाओं की सभ्यता के अर्थ में नहीं किन्तु सिंघल अथवा आदर्श की सहायता के अर्थ में लेना चाहिए। गांधी जी का मानना है कि घटनाएं और वर्णन सच्ची और हूबहू तस्वीर पेश करने वाले हो, तो समुचित प्रकार का साहित्य या कला नहीं कहला सकते। बहुत सी घटनाएं सत्य होने पर भी अहितकर और निरूपयोगी अथवा हानिकर होती है। उन्हें उपस्थित करने वाला साहित्य और कला हानिकारक ही है उदाहरणार्थ– वैश्या के घर का शब्द चित्र। गांधी जी कहते हैं कि अक्सर सत्य, नीति, धर्म इत्यादि की अंतिम विजय बनाते हुए भी उसके पहले के असत्य, अनीति, अधर्म आदि के चित्र ऐसे वीभत्स रूप में अंकित किये जाते है, जिसमें लोगों की हल्की कृत्रियों को उत्तेजन मिलता है। ऐसा साहित्य और कला भी गंदी ही मानी जायेगी।

डॉ0 रनिका

महात्मा गांधी ने कहा था ''दिल्ली भारत नहीं है, भारत तो गांवों में बसता है।'' अतः यदि हम भारत को उन्नत करना है तो गावों की दशा सुधारनी होगी। गांधी जी ने नारा दिया था ''गावों को वापस चलों''। इसी को ध्यान में रखकर ही गांधी जी के नेतृत्व में लड़ी गई आजादी की लड़ाई को गांव–गांव तक पहुचाया गया और उन सबके मिले जुले संकल्प से ही देश को आजादी मिली।[1]

गांधी जी का मानना है कि साहित्य और कला को सत्य, हितकर और उपयोगिता की कसौटी पर पास होना ही चाहिए। गांधी जी कहते हैं कि सत्य को यहां व्यापक अर्थ में लेना चाहिए। तकसील अथवा घटनाओं की सभ्यता के अर्थ में नहीं किन्तु सिंघल अथवा आदर्श की सहायता के अर्थ में लेना चाहिए। गांधी जी का मानना है कि घटनाएं और वर्णन सच्ची और हूबहू तस्वीर पेश करने वाले हो, तो समुचित प्रकार का साहित्य या कला नहीं कहला सकते। बहुत सी घटनाएं सत्य होने पर भी अहितकर और निरूपयोगी अथवा हानिकर होती है। उन्हें उपस्थित करने वाला साहित्य और कला हानिकारक ही है उदाहरणार्थ– वैश्या के घर का शब्द चित्र। गांधी जी कहते हैं कि अक्सर सत्य, नीति, धर्म इत्यादि की अंतिम विजय बनाते हुए भी उसके पहले के असत्य, अनीति, अधर्म आदि के चित्र ऐसे वीभत्स रूप में अंकित किये जाते है, जिसमें लोगों की हल्की कृत्रियों को उत्तेजन मिलता है। ऐसा साहित्य और कला भी गंदी ही मानी जायेगी।[2]

गांधी जी परवदा जेल में थे। करीमनगर की मिस मेरी बार उनसे मिलने के लिये आई। वह देहान्त में जाना चाहती थी। इसी संबंध में उन्होंने शान्ति निकेतन के बारे में कोई शंका उठाई। गांधी जी ने जवाब दिया– ''शांति निकेतन हिन्दुस्तान में एक अन्यत्र स्थान है। शायद इस पृथ्वी पर भी यह अनन्य हो। हां, यहां कुछ चीजे ऐसी भी थी जो कि गांधी जी को पसन्द नही थी। मगर किसी देहात का काम देखने की इच्छा हो तो और जगहो के साथ साथ शांति निकेतन देखने को उसे साथ सलाह देता हूं। वहां के लोग ईमानदारी से कोशिश कर रहे हैं।

इसके बाद गांधी जी आश्रम में जाने की सलाह देते हुए बोले, ''आश्रम की देखरेख मेरी कीमत का अंदाजा लगाना। मुझ में झूठी नम्रता नहीं। मैं जैसा हूं, गांधी जी कहते हैं कि मेरा दूसरा चित्र खीचले वाले मित्र भी है। मगर मनुष्य के मूल्य का अंदाजा उसकी बनाई हुई संस्था पर से लगाना चाहिए। जैसे कवि ठाकुर का मूल्य शांति निकेतन पर से लगाया जा सकता है। वैसे ही मेरी कीमत आश्रम पर लगायी जा सकती है। मनुष्य को यह बता देना चाहिए कि उसके इरादे कोई क्षण क्षण में आने जाने वाले विचार नहीं है परन्तु स्थायी रूप से अमल में लाने के होते हैं। मैं अहिंसा के बारे में जो लिखता हूं उसे अमल में लाकर दिखाना है।

गांधी जी ने फिर जयराम पेशा लोगों की बात करते हुए कहा, ''आश्रम की कमजोरी का यह विचित्र कारण है। इनका धंधा चोरी करना ही है। अतः हमें इनके बीच रहने का निश्चय कर लेना चाहिए। गांधी जी ने वहाँ कि पुलिस से हम शिकायत नहीं कर सकते। बल प्रयोग नहीं कर सकते। उनका कोई विशेष विरोध नही होता इसलिए वे ज्यादा ढीठ होते जा रहे है। इसका उपाय जरूर है। मगर उससे अमल करने को शक्ति हममें नहीं है। यह उपाय है कि हम कोई भी माल अवसान न रखे और जो हो उसको जो भी ले जाना चाहे, ले जाने दें। अहिंसा का पालन करना है। इससे सवाल जवाब तुरंत ढूंढना चाहिए। मिस बार बोटी, ''कोई कठिनाई न हो तब भी इस पृथ्वी पर सतयुग आ जाय''। गांधीजी ने कहा,

''यह तो नहीं कहा जा सकता, परन्तु मरूभूमि में हरियाली हो सकती है और आश्रम वैसा बनने की आशा रख सकता हूं।''[3]

शांतिनिकेतन–कलकत्ता यात्रा में मुझे अवनी बाबु नन्द बाबु और जामिनी राय इन तीस भारत के महान चित्राचार्यों को निकट से देखने का सौभाग्य मिला। इस त्रिमूर्ति में गत् पाचस वर्षों में चित्रकला की अनन्य साधना करके कला के प्रति लोक में नवीन जागरण उपलब्ध कराया है। श्री अवीन्द्र नाथ ठाकुर एशिया के महान चित्रकार हैं। वे नूतन भारतीय कला संस्कृति के सच्चे अर्थों में पिता हैं। इनके नेत्रों में कलाओं का जो रूप स्फुरित हुआ था आज हम उसी के विकसित शरीर की कुछ झांकी देख रहे हैं, वे नव भारतीय कला के आद्य ऋषि हैं। अस्सी वर्ष की आयु का भार लिये हुये आज भी वे हमारे मध्य में हैं। पर हमने उन्हें जीते जी भुला दिया है। उनका देवतुल्य नश्वर शरीर जराजीर्ण दशा में कलकत्ते के बाहर एकान्त में आज किस दिशा में है और इससे कितने भारतीय परिचीत हैं।[4]

भारतीय बुद्धि जीविता जहां एक ओर शताब्दियों से विश्व विमर्श का केन्द्र रही है। गोस्वामी तुलसीदास, गाधी विवेकानन्द एवं टैगोर सरीखे महत्वपूर्ण मूर्धन्यों से हमारी भरतीयता की अवधारणा, कुछ अधिक ही पुरणता होती दिखाई पड़ती है। इसी उपक्रम में चन्द्र भारतीय चित्रकारों ने भी भारत को विश्वजनी न प्रतिष्ठा दिलाने में अपना अदभुत योगदान किया है। इसकी शुरूआात त्रावणकोर राज्य के महाराजा रवि वर्मा से होती है, तदुपरांत नन्दलाल बोस, भवेश सान्याल, अमृता शेरगिल, रामकुमार, रजा, एम0एफ0 हुसैन से होती हुई गांधी गजवानी, गणेश पाईन, मंजीतबाबा आदि तक आते आते चरम पर पहुंच जाती है। नन्दलाल बोस द्वारा निर्मित चित्र श्रृंखला जो प्रायः हरिपुरा पोस्टर्स के नाम से अधिक प्रसिद्ध हैं, उनके कला जीवन के अत्यधिक महत्वपूर्ण कल की कला कृतियां हैं। ये कृतियां कला–शैली और अभिव्यक्ति माध्यम के साथ उनके प्रयोगों की प्रतिनिधित्व करती हैं। इन कृतियों की रचना चित्र के रूप में न होकर पंडाल और द्वार को सजाने के लिए चित्र पट्टों के रूप में हुई थी। चित्रों द्वारा सजावट का पद कार्य उन्हें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के गुजरात में 1938 में हुए हरिपुरा अधिवेशन में सौपा गया था।

ये चित्र उसी महान कार्य का हिस्सा थे। अंतर केवल इतना है कि इनका अनुरोध महात्मा गांधी ने किया था। एक उत्कृष्ट मानव के रूप में गांधी जी ने किया था। एक उत्कृष्ट मानव के रूप में गांधी का नन्दलाल बोस पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा था। कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर के बाद नन्दलाल के बाद के जीवन में गांधी उनके आध्यात्मिक पद–प्रदर्शक बन गए। नन्दलाल के साथ महात्मा गांधी जी का परिचय शांति निकेतन में हुआ था। जिस सर्मपण भाव एवं निष्ठा के साथ यह शांत मृदु स्वभाव का व्यक्ति कलाभवन में अपनी कला साधना एवं शिक्षण कार्य में तल्लीन था। उसे देखकर गांधीजी बहुत प्रभावित हुए। उस समय ऐसे बहुत ही थोड़े चित्रकार थे जो कला के प्रति समर्पित थे और साथ ही जिन्हें यह एहसास भी था कि समय में उस वक्त कलाकार की कथा भूमिका हो सकती थी। गांधी जी तथा स्वदेशी आन्दोलन के प्रति नन्दलाल का कितना आदर व सम्मान का भाव था, उसका अनुमान इस कलाकार के प्रसिद्ध छपाई–खांचे में बने गांधी जी के डांडी यात्रा चित्र में लगाया जा सकता है। चित्र में गांधी जी का चित्रण उनकी आत्मशक्ति के प्रतीक के रूप में हुआ है। इस चित्र में गांधी जी को मार्च के इस एतिहासिक नमक आंदोलन से भिन्न भिन्न मुद्राओं में दिखा गया है। छपाई खांचे में बना अब्दुल

गावकार खान का उस समय का चित्र भी एक उत्तम कलाकर्षति है। नन्दलाल की दृष्टि में महात्मा गांधी न केवल एक महान नेता थे, बल्कि एक ऐसी महान आत्मा थे जिनके आध्यात्मिक आदर्श व धारणाएं बहुत ऊँची थी। गांधी जी की तरफ से आया कोई अनुरोध नन्दलाल बोस के फिर सम्मान की बात थी। हरिपुरा चित्रों से इस सत्य का बोध होता है कि नन्दलाल अपना कला साधना से ओरियन्टल सोसायटी के प्रवास कालीन अथवा कलकत्ता स्थित चित्रकारों से कितने आगे निकल गये थे यहां पर वाश शैली में चित्र बनाये जाते थे, अथवा पुस्तक में नाम आने वाले चित्र बनाये जाते हैं। उनकी हरिपुरा श्रृंखला की चित्रों का विषय साधारण जीवन के ईद–गिर्द घूमता था। उन्होंने झोपड़ियों, पर्व उत्सव ग्रामीण दृश्य गद्य यन्त्रों तथा लोक आंचले में व्याप्त दैनन्दिन की तमाम चीजों को अपने कैनवास पर उतारा। इस कार्य में उनकी तीन मुख्य सहयोगी विनोद बिहारी मुखर्जी, विश्वरूप बोस एवं पेरूमल माने जाते हैं। इनमें विश्वास बोस उनके पुत्र थे।

यदि इन चित्र पट्टों को अलग से देखा जाए जो सजावटी वस्तु के रूप में इनका मोहक प्रभाव कुछ कम प्रतीत होता है। लेकिन ब्रश की सुन्दर उन्मुक्त सफाई और रंगों की शोभा व मामा लिये हुये ये चित्रपट जो ग्रामीण लोगों के लिए निमित थे दैनिक जीवन की झांकी लिये नजर आते है। अपनी शैली और शैली विन्यास दोनों में ही ये रंग चित्रपटट तथा बांस और सरकंडों की बनावट गांधी–दर्शन के सजावटी प्रतीकों का अमर रूप लिये हुए है, यदि हम सौन्दर्य शास्त्र के साथ गांधीजी का नाम जोड़ सके। राष्ट्र सेवा में नन्दलाल के योगदान की ये सरकार मूर्तियां हैं।

इस तरह का एक विशेष निष्कर्ष, हमारी भरतीय बुद्धिजीविता एवं कला समुदाय से निकल कर आता है। वह यह कि अपना विशिष्ट मुहावरा गढ़ने में इन कलाकारों का किसी न किसी अवान्तर कारणों द्वारा प्रभावित होता रहा है। यदि राजा रवि वर्मा पारसी थिएटर और पेरिस के चित्रकारों से प्रभावित रहे जो नन्दलाल बोस, रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं महात्मा गांधी से। रेणे के उपन्यासों में गांधीवाद पर चढ़कर बोलता है, तो 'राग दरबारी' तक आते–आते उसी गांधी–नेहरू युग के मोह भंग का विस्तार हुआ है। किशोरी अमोणकर की गायकी मीरा के उदाप्त चरित्र से प्रभावित है, तो कुमार गन्धार्व 'आधुनिक कबीर' ठहरते हैं। कुल मिलान नन्दलाल बोस के हरिपुरा पटटचित्र भी यही सिद्ध करते हैं कि उनकी प्रखट कला ज्यामितीय का शक्ति केन्द्र गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं महात्मा गांधी के विचारों के मिश्रण की विनय अभिव्यक्ति है।[5]

अवनीन्द्र नाथ के सभी चित्र डेढ़ फुट–दो फुट लंबे हैं। फारसी राजपूत और मुगल पोथियों के चित्र की तरह। बहुत बड़ा चित्र वाश पद्धति से बनाना हो तो काबू में रहता क्योकि कागज को हर समय गीला नहीं रखा जा सकता। वाश पद्धति से बनाये अवनीन्द्रनाथ के बड़े चित्रों में औरंगजेब के (साढ़े छः गुने चार फुट) और त्रयी (एण्डूज–रवीन्द्रनाथ–गांधी जी : चार फुट गुने डेढ़ फुट) उल्लेखनी है। उनके छात्रों में 'उमारव्य' था। (उमा की व्यथा तीन फुट गुने तीन फुट), 'पार्थसारथी' (चार फुट गुने तीन फुट),

'पार्थसार थी' (चार फुट गुने तीन फुट) और अजन्ता और बाघ की गुफाओं के चित्रों की प्रतिलिपि आदि को इस पद्धति के बड़े चित्रों में रखा जा सकता है। बड़े चित्र के गीले कागज को काफी देर तक नम रखने के लिए उसके नीचे एक बड़ा गीला कपड़ा तह करके रखना अच्छा होता है। ऐसा करके बहुत देर तक काम किया जा सकता है। कागज के उपर बड़े जल के बर्तन से पानी डालकर काम किया जाता है। बड़े चित्र में कैनवास लगाने के फ्रेम पर चढ़ा कर वाश करने की सुविधा रहती है।[6]

बेन्द्रे को शैली या वाद में नहीं बांधा जा सकता। भारतीय समकालीन कला में आकार, संयोजन और उन सबसे बढ़कर रंग संयोजन के माध्यम से उनकी पहचान इतनी स्थायी और मौलिक है कि समकालीन कला के बहुत से वादों तथा शैलियों रीतियों में कार्य करने के बावजूद बेन्द्रे अपने व्यक्तित्व से कहीं अधिक विशाल नजर आते हैं।[7] प्रो0 रतन पारिमू ने अपने तेरंग में इस बात का वर्णन किया है कि 1945 में शांति निकेतन में उनका सकना उनके प्रयासों को 'प्राकृतिकवाद', 'आधुनिकता' तथा 'परम्परागत शैली' से जोड़ने का आराम था। शांति निकेतन पहुचने से पहले उनकी कलाकृतियां 'आधुनिक' थी। 1942 की पेंटिंगस में से एक से एक का शीर्षक था। ''भारत छोड़ो आन्दोलन'' वह आंदोलन जो कि महात्मा गांधी के द्धारा आरम्भ हुआ था। 6 और 7 अगस्त, 1942 को एक एतिहासिक कांग्रेस बैठक बम्बई के ग्वालिअन्तक में आयोजित हुई। हां, गांधी जी ने ब्रिटिश सरकार के प्रति विरोध दिखाने के लिये ''भारत छोड़ों'' का नारा दिया। इस समय बेन्द्रे ने इस घटना पर एक कैनवास पेंट किया। यह कलाकृति वान्गांग के ब्रश स्ट्रोक्स शैली में बनाई गई। पेंटिग का विषय सामाजिक बिन्दुओं पर था। यहां यह भी महत्वपूर्ण है कि परिस्थिति से संबंधित उनका अपना सरोकार उनके राय की एक आधुनिक (अद्यतन) संयोजन बनाता है।[8]

आज की कला में प्रिंट मेकिंग की एक अनोखी दुनिया है। दरअसल इसमें इसके रचना संसार में कुछ ज्यादा ही तकनीक और एक प्रकार के क्राफटमेन– शिप का भी झंझट है और यदि इसकी प्रक्रियाओं का ठीक से निष्पादन न हो तो सारी मेहनत बेकार। मगर तब भी दुनिया भर में चाक्षुष कला के क्षेत्र में अनेक सृजनशील लोग अम्लाकन, शिला–लेखन, फोटो लिथो, सेराग्राफी, वुड प्रिंट और अन्य कुछ छापा माध्यमों का इस्तेमाल अपने सृजन के लिये कर रहे हैं। कई तरह के छापे उगाए जा रहे हैं। बड़े–बड़े आकारों में भी प्रदर्शनियों आयोजित की जा रही हैं। कुछ देश तो छापा कला की अलग से बड़ी द्वैवार्षिकी भी कर रहे है। मगर विचारणीय है कि इसमें कला सजृन कस पक्ष कितना सार्थक है। वैसे

किसी भी कला विश की उसकी आंतरिक संवेदना की प्रमुख होती है और यही बात कलाकार की कला से पहचान कराती है।[9]

विजय बामोड़ी भी प्रिंट मेंकिग में ऐसा नाम है जो स्पष्ट विचारों के लिए भी जाने जाते हैं। विजय से जब प्रश्न किया गया कि भारतीय प्रिंट मेकर में किन लोगों का काम इन्हें पसन्द है तब इन्होंने स्पष्ट रूप से बताया कि दत्राश्रेय आप्टे का शिलालेखन एवं अम्लांकन इन्हें अधिक पसन्द है। लेदर पेपर प्रभाव वाले अजित दुबे का आलंकन एक समय का अनिल बिहारी का शिलालेख (स्व) सुरंजन बसु निर्मल दास तथा युवा कलाकारों में विराज नायक के अम्लांकन इन्हें अच्छे लगते हैं। बहरहाल कुछ समकालीन भारतीय प्रिंट मेकर के अविस्मरणीय काम की याद भी इन्हें अवश्य होगी। सम्पति अपने अनुभवों के साथ विजय बगोड़ी ने जो रचा है, इनमें भी निश्चय ही कुछ अविस्मरणीय हैं। इनकी अम्लांकन कृति 'ए ट्रिव्यूर' (राज्य कर), ब्टिविन शैड्स एण्ड सैडोज (छाया और प्रतिबिम्ब के मध्य) गांधी एंड द फीट आफॅ गांधी जी (गांधीजी और पद्चिन्ह), होय फाटॅ द एण्ड आफ ट्रेटर (आतंक का अंत), पपेटर (कठपुतली नचाने वाला) तथा ग्लोबल वार्मिंग (वैश्विक तपन) इन वेक आफ गॉड आफ फारचून (ईश्वर जागरण, ईश्वर का भाग्य), ट्रिव्यूट टू लैक्रर्स (मजबूर) जैसी उनकी कलाकृतियां इनमें विचार और सृजन को परिभाषित रहती है। इन कृतियों में गंभीर छाया के बीच से कही माध्यम और हल्के तीव्र प्रकाश उभरे हैं, जो विषय की बहुत प्रभावशाली बनाते हैं। अपने लगभग आकृति पर रूपाकारों के साथ ज्यादातर के निर्माण में रेखाएं प्रत्यक्ष नहीं रह गई हैं। कुल मिलाकर इनमें अम्लांकनों और शिलालेखनों की सष्जनात्मकता और इनमें विचारों के समन्वय हमें समान रूप से प्रभावित करते हैं।[10]

प्रिंट विद्या में कालापाई का नाम उल्लेखनीय है। कालापाई के जीवन और व्यक्तित्व की ये विशेषतायें उनकी कला कृतियों में भी अभिव्यक्तियां इंगित है। इस दृष्टि से कालाई की कला पलायनवादी होकर स्वीकारवादी है। रवीन्द्रनाथ टैगोर के ललित निबंध 'कोबोर धर्मों' में शब्दों में ''जब अन्तस में छलछलाती जीवन शक्ति मचल उठती है और रोके नहीं सकती तो वह कला बनकर बरसने लगती है।'' उदाहरणार्थ उसकी कषति गांधी जी से कहा जगत में हलचल सी हुई। न्यूयार्क टाइम्स में प्रख्यात कलालोचर होवर्ड देवी ने कलापाइ को 'कलागगन का एक नया सितारा' बताया उन्होंने कहा कि गांधी के संदेश के अनुरूप दी कलापाई की अधिकांश कषतियां विनम्र भी हैं और सशक्त भी, उनमें लौकिकता भी है और वे रूदानी भी हैं। रेखाओं की स्वतन्त्रत सत्ता का एक अदभूत उदाहरण है। उनकी रचना 'ला वाल्स' (बाज नृत्य) जिसमें रेखाओं का मनोहर जाल सा बिछा है, और उनकी तालवद पश्चाप

से आकर्षतियां बल बिखेर रही हैं। इस कर्षति में कालापई ने छापा प्रकाश द्वारा रेखांकन को सजाया है। लगता है उन के हाथ में जादू है। वस्तुतः यह कृति एक इन्द्रजाल है।[11]

संदर्भ ग्रंथ

1. सविता कुमारी, कुरूक्षेत्र, अंकः 1 2 प्रकाश विभाग, पूर्वी, खंड–5, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली पृ0 24।
2. किशोर लाल मशरूवाला, गांधी विचार दोहन, सस्ता साहित्य मण्डल, नयी दिल्ली, पृष0 171।
3. विष्णा प्रभाकर, मेरा पेट भारत का पेट, मार्तण्ड उपाध्याय मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली, पृ0 34–35।
4. विनोद भारद्वाज, समकालीन कला, अंक 26 मार्च–जून 2005, पृ0 29, 55।
5. डा0 ज्योतिष जोशी, समकालीन कला अंक नवम्बर 2005–फरवरी 2006, ललित कला अकादमी, रवीन्द्र भवन, 35 फीरोज शाह मार्ग, नई दिल्ली, पृ0 22
6. अवधेश मिश्र, क्षेत्रीय समकालीन कला, राष्ट्रीय ललित कला केन्द्र, एकता बिहार, अलींगज, लखनउ–226024, पृ0 73।
7. डा0 ज्योतिष जोशी, समकालीन कला ललित कला अकादमी, रवीन्द्र भवन, 25 फीरोजशाह मार्ग अंक 35, मार्च–जून 2008, पृ0 22।
8. अवधेश मिश्र, क्षेत्रीय समकालीन कला, राष्ट्रीय ललित कला केन्द्र, एकता बिहार, अलींगज, लखनउ–22624, पृ0 67।
9. वही–69।
10. 'कला दीर्घा', दृश्य कला की अंतरर्दशीय पत्रिका, अक्टूबर 2013, अंक 27, पृ0 13।
11. डा0 ज्योतिष जोशी, समकालीन कला अंक 35 (मार्च–जुन 2008) ललित कला अकादमी, रवीन्द्र भवन, 35 फीरोजशाह, नई दिल्ली पृ0 31।

डॉ0 रनिका